समाज, संस्कृति और शिक्षा में समसामयिक भारत और नारी

अवधेश कुमार

असि0 प्रोफेसर– नेहरू ग्राम भारती
(डीम्ड टू बी) विश्वविद्यालय
जमुनीपुर, प्रयागराज

समाज –

सामान्य रूप से व्यक्तियों के समूह को समाज कहते हैं। व्यक्तियों के इन समूह विशेषों का अध्ययन सभी सामाजिक विज्ञानों में किया जाता है। मानवशास्त्र में मनुष्यों के किसी भी समूह को समाज की संज्ञा दी जाती है, यहाँ तक की आदिम समुदाय को भी समाज कहा जाता है। भूगोल में क्षेत्र विशेष के समान सभ्यता वाले लोगों के समुदाय को समाज कहते हैं; जैसे– भारतीय समाज, यूरोपीय समाज। धर्मशास्त्र में धर्म विशेष के मानने वाले समुदाय को समाज कहते है; जैसे–हिन्दू समाज, ईसाई समाज और मुंसलमान समाज। राजनीतिशास्त्र में राज्य विशेष के लोगों के समूह को समाज कहते हैं; जैसे–भारतीय समाज, ब्रिटिश समाज,और अमेरीकी समाज।परन्तु समाजशास्त्र में समाज का अर्थ इन सबसे भिन्न रूप में लिया जाता है।

समाजशास्त्रीय अर्थ में व्यक्तियों के समूह को समाज नहीं कहते अपितु समूह के व्यक्तियों में पाये जाने वाले सामाजिक सम्बन्धों कि व्यवस्था अथवा जाल को समाज कहते हैं।अब प्रश्न उठता है कि सामाजिक सम्बन्ध क्या है। जब दो या दो से अधिक व्यक्ति एक–दूसरे के प्रति सचेत होते हैं और एक दूसरे के प्रति कुछ व्यवहार करते हैं तो हम कहते हैं कि उनके बीच सामाजिक सम्बन्ध स्थापित हो गए हैं। यह आवश्यक नहीं की ये सम्बन्ध मधुर और सहयोगात्मक ही हों, ये कटु और संघर्षात्मक भी हो सकते हैं। समाजशास्त्र में इन दोनों प्रकार के सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार समाज का सर्वप्रथम मूल तत्व दो या दो से अधिक व्यक्तियों की पारस्परिक जागरूकता है। दो या दो से अधिक व्यक्तियों के एक दूसरे के प्रति सचेत होने के लिए यह आवश्यक है कि उनके उद्देश्य अथवा विचारों में या तो सामानता हो या भिन्नता। इस प्रकार समानता अथवा भिन्नता समाज का दूसरा मूल तत्व होता है। यह पारस्परिक जागरूकता दो ही रूपों में परिणित हो सकती है–सहयोग में अथवा संघर्ष में इसलिए सहयोग अथवा संघर्ष को समाज का तीसरा मूल तत्व माना जाता है। वस्तुस्थिति यह है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु एक दूसरे के प्रति सचेत होते हैं और वे तब तक इन सम्बन्धों से नहीं बंधते जब तक उनकी एक दूसरे से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती। इसे समाजशास्त्री अन्योन्याश्रितता कहते हैं। यह समाज का चौथा मूल तत्व होता है। समाज के बारे में दो तथ्य और हैं, एक तो यह कि समाज अमूर्त होता है और दूसरा यह

Scanned with CamScanner

कि यह केवल मनुष्य जाति में ही नहीं अपितु पशु–पक्षियों और कीड़े–मकौड़ों में भी पाया जाता है, यह बात दूसरी है कि समाजशास्त्र में केवल मानव समाज का ही अध्ययन किया जाता है।

संस्कृति

यह संसार एक विचित्र अजायबघर है। इसकी समस्त वस्तुओं एवं क्रियाओं को हम मोटे तौर पर दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं–एक प्राकृतिक और दूसरी मानव द्वारा निर्मित एवं विकसित। कुछ विद्वानों की दृष्टि से संस्कृति में वह सब आता है जो मानव द्वारा निर्मित एवं विकसित है; जैसे–बर्तन,वस्त्र,आभूषण,मकान,मशीन,औजार,हथियार,आवागमन एवं दूर संचार के साधन,रहन–सहन एवं खान–पान की विधियॉ,व्यवहार मानदण्ड, भाषा साहित्य, कला–कौशल, संगीत–नृत्य, धर्म–दर्शन, आदर्श–विश्वास और मूल्य। परन्तु कुछ विद्वान मनुष्य की समस्त उपलब्धियों को संस्कृति नहीं मानते। भारतीय दृष्टि से तो केवल लोकहितकारी उपलब्धियॉ ही संस्कृति का अंग होती हैं। संस्कृति शब्द से भी यही अर्थ निकलता है। संस्कृति सम कृति अच्छी प्रकार से सोच समझ कर किये गए कार्य। हमारे भारतीय साहित्य में संस्कृति को संस्कारों के प्रतिफल के रूप में ही लिया गया है। प्रश्न उठता है–यह संस्कारों का प्रतिफल क्या है। हम जानते हैं कि मनुष्य की जन्मजात प्रकृति अन्य जीव–जन्तुओं सी ही होती है, शिक्षा और संस्कारों की प्रक्रिया द्वारा इसकी इस प्रकृति में परिवर्तन किया जाता है। अब यदि यह परिवर्तन लोकहितकारी होता है तो उसे संस्कृति कहते हैं और यदि लोकअहितकारी होता है तो उसे विकृति कहते हैं। हिन्दू समाज में तो उसी व्यक्ति को सुसंस्कृत कहा जाता है जो संस्कारों की योजना में होकर गुजर चुका होता है और जो तद्नुकूल आचरण करता है। नीतिशास्त्र में तो केवल धर्म, दर्शन, आदर्श, विश्वास और मूल्यों को ही संस्कृति माना जाता है।

समाजशास्त्रीय अर्थ में व्यक्तियों के समूह को समाज नहीं कहते अपितु समूह के व्यक्तियों में पाये जाने वाले सामाजिक सम्बन्धों कि व्यवस्था अथवा जाल को समाज कहते हैं।अब प्रश्न उठता है कि सामाजिक सम्बन्ध क्या है। जब दो या दो से अधिक व्यक्ति एक–दूसरे के प्रति सचेत होते हैं और एक दूसरे के प्रति कुछ व्यवहार करते हैं तो हम कहते हैं कि उनके बीच सामाजिक सम्बन्ध स्थापित हो गए हैं। यह आवश्यक नहीं की ये सम्बन्ध मधुर और सहयोगात्मक ही हों, ये कटु और संघर्षात्मक भी हो सकते हैं। समाजशास्त्र में इन दोनों प्रकार के सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।

इस युग में संस्कृति पर सबसे अधिक चिन्तन मानवशास्त्रीयों और समाजशास्त्रीयों ने किया है। मानवशास्त्री न तो मनुष्य की समस्त उपलब्धियों को संस्कृति मानते हैं और न उसे केवल धर्म,दर्शन, आदर्श, विश्वास और मूल्यों तक सीमित करते हैं। उनकी दृष्टि से किसी मानव समाज की संस्कृति में वह सब आता है जिसे मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में सीखता है; जैसे –ज्ञान–विज्ञान, कला–कौशल, रीति–रिवाज, आदि। प्रशिद्ध पाश्चात्य मानवशास्त्री टेलर महोदय ने संस्कृति को इसी रूप में परिभाषित किया है। उनके शब्दों में–

Scanned with CamScanner

संस्कृति वह जटिल पूर्णता है जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता,नियम, रीति–रिवाज और इसी प्रकार की अन्य क्षमताओं और आदतों का समावेश होता है जिन्हें मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में सीखता है।

समाज और शिक्षा में सम्बन्ध –

समाज और शिक्षा में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है परन्तु इससे पहले की हम समाज और शिक्षा के इस आपसी सम्बन्ध के विषय में विचार करें, यह आवश्यक है कि हम शिक्षा के सन्दर्भ में समाज के वास्तविक अर्थ से परिचित हों। समाजशास्त्रीय भाषा में समाज एक अमूर्त सम्प्रत्यय है, सामाजिक सम्बन्धों का जाल है, परन्तु सामान्य प्रयोग में सामाजिक सम्बन्धों से बने समाज विशेष को समाज कहते हैं। समाजशास्त्रीय भाषा में इसे एक समाज कहते हैं। आज संसार के प्रायः सभी राष्टों में शिक्षा की व्यवस्था करना राज्य का उत्तरदायित्व माना जाता है और इस दृष्टि से राज्य विशेष की सम्पूर्ण जनता ही उस राज्य का समाज होती है। आज जब हम शिक्षा के सन्दर्भ में समाज की बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य राज्य अथवा राष्ट विशमष की सम्पूर्ण जनता से ही होता है। जब हम इस प्रकार के किसी समाज का अध्ययन करते है तो उसके अन्तर्गत उसके घटक व्यक्ति–व्यक्ति, व्यक्ति–समूह और समूह–समूह के सामाजिक सम्बन्धों अथवा सामाजिक अन्तःक्रियाओं का ही अध्ययन करते हैं। तथ्य यह है कि जैसा समाज होता है वैसी ही उसकी शिक्षा होती है और जैसी किसी समाज की शिक्षा होती है वैसा ही वह समाज बन जाता है।

संस्कृति और शिक्षा में सम्बन्ध–

संस्कृति किसी समाज की पहचान होती है। यह उसके रहन–सहन एवं खान–पान की विधियों, व्यवहार प्रतिमानों, रीति–रिवाज, कला–कौशल, संगीत–नृत्य, भाषा–साहित्य, धर्म–दर्शन, आदर्श–विश्वास और मूल्यों के विशिष्ट रूप में जीवित रहती है। तब किसी समाज की शिक्षा पर उसकी संस्कृति का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। आप देखें कि जिस समाज की संस्कृति अध्यात्मप्रधान होती है उस समाज में शिक्षा स्थूल की अपेक्षा सूक्ष्म की प्राप्ति की ओर अधिक झुकी होती है और जिस समाज की संस्कृति भौतिकवादी होती है उसकी शिक्षा प्रतियोगिता पर आधारित होती है और शिक्षा के क्षेत्र में भौतिक उद्देश्यों की प्राप्ति की ओर नियोजित होता है। दूसरी ओर कोई समाज शिक्षा के माध्यम से ही अपनी संस्कृति को सुरक्षित रखता है, उसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संक्रमित करता है और उसमें परिवर्तन एवं विकास करता है। इस प्रकार संस्कृति और शिक्षा में गहरा सम्बन्ध होता है, ये एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। सच पूछिए तो एक के अभाव में दूसरे के विकास की कल्पना ही नहीं की जा सकती। यहॉ हम इनके एक–दूसरे पर पड़ने वाले प्रभावों को और अधिक स्पष्ट किए देते हैं।

समसामायिक भारत में नारी –

वर्तमान समय में भारत सरकार ने महिलाओं के उत्थान हेतु अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन तो कर ही रही है लेकिन इन योजनाओं का लाभ निचले स्तर तक सही ढंग से न पहुॅचने के कारण स्त्रियों को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है लेकिन यह भी सत्य है कि तात्कालिक समय में स्त्रियों की स्थिति में काफी बदलाव दिखाई दे रहा है। फिर भी अनेक स्थानों पर पुरूषों द्वारा प्रताड़ित किया जा रहा है। फिर भी भारतीय नारीयॉ संसार की

Scanned with CamScanner

अन्य नारियों की भॉति अपनी समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखती हैं। इसी आधार पर भारत के उज्जवल भविष्य की संभावनाएं दिखाई देती है। वे लोग उचित, अनुचित, न्याय–अन्याय दायित्व और दायित्व हीनता, श्लीलता और अश्लीलता के अन्तर को समझकर अपने कार्यों को अंजाम देने के साथ–साथ सामाजिक सरोकारों का निर्वहन कर रही है।

सामाजिकता के निर्वहन में स्त्री पुरूष को समान रूप से सहभागी बनना होगा और इसीलिए एक दूसरे को प्रतिद्वन्दी न समझे बल्कि सहयोगी समझकर अपने कार्यों को सुसंगठित एवं सुव्यवस्थित रूप से करने की चेष्टा करें। पुरूषों द्वारा एक स्त्री को एक देह से अलग एक स्त्री के रूप में देखना होगा। किसी की मजबुरी किसी के लिए व्यवसाय न बने यह समाज को ध्यान देना होगा। आज देखने में आ रहा है कि महिलाओं ने स्वयं के अनुभव के आधार पर अपनी मेहनत और आत्मविश्वास के द्वारा कठिन से कठिन मंजिल को प्राप्त कर रही हैं तथा इसके लिए नये रास्ते का इजाद भी कर रही है।

सतही तौर पर देखा जाये तो लगता है कि भारत ही नहीं अपितु विश्व पटल पर अपनी पहचान बनाती हुई स्त्रियों ने अपनी पुरानी मान्यतायें भी बदली हैं। वर्तमान समय में स्त्री की स्मिता का प्रश्न मुखर होता जा रहा है। अपने अस्तित्व बचाये रखने के लिये संघर्ष करती हुई स्त्रियों ने लम्बा रास्ता तय कर लिया है।परन्तु आज भी एक बडा हिस्सा सदियों से सामाजिक अन्याय का शिकार है। जब–जब स्त्री अपनी उपस्थिति दर्ज कराना चाहती है। तब–तब जाने कितनी रीति–रिवाजों, परम्पराओं, पौराणिक आख्यानों की दुहाई देकर उसे गुमनाम जीवन जीने हेतु विवश कर दिया जाता है वस्तुतः 21वीं सदी महिला सदी है। वर्ष 2001 को महिला शसक्तीकरण के रूप में मनाया गया और उसी के आधार पर सर्वप्रथम राष्टीय महिला उत्थान नीति बनायी गयी ताकि विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं का उत्थान और समुचित विकास हो सके। इसमें आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में पुरूषों के साथ सामान आधार पर महिलाओं द्वारा समस्त कार्य किया जाये। महिला शिक्षा समाज का आधार है। समाज द्वारा पुरूष को शिक्षित करने का लाभ केवल मात्र पुरूष को होता है। जबकि महिला शिक्षा का स्पष्ट लाभ परिवार, समाज और सम्पूर्ण राष्ट को होता है। हालांकि कुछ समय तक महिला शिक्षा के समर्थक कम थे। आज समय एवं परिस्थितियों ने महिला शिक्षा को अनिवार्य बना दिया है।

महिलाओं को शिक्षा देने तथा सामाजिक कुरितियों को दूर करने के लिये जो सुधार आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। उससे समाज में नई जागरूकता उत्पन्न हुई है। बाल विवाह, भ्रूण हत्या पर सरकार द्वारा रोक अथक प्रयास हुआ है। गॉधी जी ने कहा था कि एक लड़की की शिक्षा एक लड़के की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि लड़के को शिक्षित करने पर वह अकेला शिक्षित होता है किन्तु एक लड़की की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है। शिक्षा ही वह कुन्जी है जो जीवन के सभी द्वार खोल देती है जो कि आवश्यक रूप से सामाजिक है।

महिलायें अपनी स्थिति अपने अधिकारों के विषय में सचेत होने लगीं। शिक्षा ने उन्हें आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक न्याय तथा पुरूष के साथ समानता के अधिकारों की मॉग करने को प्रेरित किया। आज भी नारी राजनीति, कारोंबार, कला तथा नौकरीयों में पहुॅचकर नये आयाम ढूॅढ रही हैं। उसके साथ–साथ फौज, खेल, पायलट ऐसे क्षेत्रों में महिलाओं के होने की

Scanned with CamScanner

कल्पना भी नहीं की जा सकती है परन्तु वहॉ पर नारी स्वयं को स्थापित नही कर पायी है बल्कि वहॉ सफल भी हो रही है।

यदि आपको विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वतः हो जायेगा– पं0 जवाहर लाल नेहरू के अनुसार देखा जाये तो नौकरी वाली नारी के साथ पुरूष के मानसिकता में बदलाव आया है। पहले नौकरी वाली औरत के पति को ''औरत की कमाई खाने वाला'' कहकर चिढ़ाया जाता था। आज यह सोच बदल चुकी है अर्थात पुरूष की मानसिकता में भी बदलाव आया है। तात्कालिक समय में महिलाओं ने शैक्षिक, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, प्रशासनिक, खेल, कूद आदि विविध क्षेत्रों के साथ–साथ आत्मनिर्भर, स्वनिर्मित, आत्मविश्वासी होकर पुरूष प्रधान चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में भी अपनी योग्यता प्रदर्शित की है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1– राजकुमार डा0– नारी के बदले आयाम, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस

2– गुप्ता कमलेश कुमार, महिला सशक्तिकरण, बुक एनक्लेव, जयपुर

3– सिंह करण बहादुर, महिला अधिकार व सशक्तिकरण, कुरूक्षेत्र, मार्च 2006

4– श्रीवास्तव सुरेश लाल, राष्टीय महिला आयोग, कुरूक्षेत्र मार्च 2007

5– व्यास, जयप्रकाश, नारी शोषण, ज्ञानदा प्रकाशन 2003

6– आहुजा, राम (1999), भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत प्रकाशन, जयपुर

7– जोशी, पुष्पा (1988), गॉधी आन वोमन, सेन्टर फार वोमन्स डेवलपमेंन्ट स्टडीज, दिल्ली

Scanned with CamScanner